महाकवि मेधाव्रत के काव्यों में वर्षा ऋतु

ममता

शोध सारांश

प्रकृति की गोद में स्थित हमारा भारत देश अनेक कारणों से विश्व के अन्य देशों से भिन्न है l हमारा भारत देश हमेशा से ही अपनी संस्कृति अपने रीति रिवाज इत्यादि के माध्यम से एक अतुलनीय भारत के रूप में स्थित रहा है l एक भारतवर्ष ही ऐसा देश है जहां पर वर्ष भर में छ: ऋतुओं का आगमन होता है l ऋतु परिवर्तन फसल, वन, पशु-पक्षियों तथा प्रत्येक भारतीय को प्रभावित करता रहा है। इन छ: ऋतुओं में प्रकृति के विभिन्न रूपों का दर्शन होता है I परिवर्तित होती प्राकृतिक छटा सभी के मन को हर लेती है। इसी प्राकृतिक छटा ने संस्कृत साहित्य के कवियों को भी बहुत प्रभावित किया है I हमारे संस्कृत साहित्य में वैदिक काल से ही ऋतुओं पर चर्चा किसी न किसी माध्यम से होती रही है l महाकवि कालिदास जी ने तो ऋतुओं को आधार बनाकर ऋतुसंहार नामक खंडकाव्य की रचना ही कर दी थी l इस प्रकार कवियों ने किसी न किसी रूप में अपनी रचनाओं में ऋतुओं पर प्रकाश डाला हैं। ऋतु वर्णन की सुदीर्घ परम्परा में बीसवीं शताब्दी के विद्वान आचार्य मेधाव्रत ने भी अपनी रचनाओं में ऋतुओं का बहुत सुन्दर वर्णन किया है। इस शोधपत्र में कवि मेधाव्रत की रचनाओं (प्रकृतिसौन्दर्यम्, दयानन्ददिग्विजयम्, कुमुदिनीचंद्र) को आधार बनाकर वर्षा ऋतु पर विस्तृत प्रकाश डाला जायेगा।

कूट शब्द- आच्छादित, पीतवर्णीय, अभिसारिकाओं, आध्यात्मिक, गड़गड़ाहट ।

भूमिका -

बीसवीं शताब्दी के मूर्धन्य विद्वान कविवर मेधाव्रत को प्रकृति प्रेमी के रूप में जाना जाता है। बाल्यकाल से ही प्रकृति के सम्पर्क में होने के कारण इनकी लगभग सभी रचनाओं में प्राकृतिक छटा दिखायी देती है। महाराष्ट्र प्रान्त में जन्मे कवि मेधाव्रत ने भारतवर्ष में क्रम से आने वाली ऋतुओं का अपनी कृतियों में सजीव चित्रण

किया है।

इन छ: ऋतुओं में वर्षा ऋतु को भी सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इस ऋतु के आने पर ग्रीष्म ऋतु द्वारा प्रतप्त वसुन्धरा शीतल तथा नम्र हो जाती है। वर्षाकाल में पेड़ पौधे हरे भरे हो जाते हैं। सृष्टि में नूतन ऊर्जा का संचार होता है। नदियाँ जल से परिपूर्ण हो जाती है। इस ऋतु में सम्पूर्ण आकाशमण्डल मेघों से आच्छादित हो जाता है। सभी प्राणी इस मनभावन ऋतु का हृदय से अभिनन्दन करते हैं।

महाकवि मेधाव्रत ने वर्षा ऋतु का अपनी रचनाओं में सजीव चित्रण किया है। इनकी तीन रचनाओं में ऋतुओं पर विस्तृत जानकारी हमें प्राप्त होती हैं इसलिए तीनों (प्रकृतिसौन्दर्यम्, दयानन्ददिग्विजयम्, कुमुदिनीचंद्र) में वर्णित वर्षा ऋतु के स्वरूप पर इस पत्र में प्रकाश डाला जायेगा,जो इस प्रकार हैं-

प्रकृतिसौन्दर्यम्-

यह एक नाटक हैं। इसमें ऋतुओं तथा प्रकृति के विविध उपादानों पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। महाकवि के सम्पूर्ण नाटक में प्रतिपादित प्राकृतिक सौन्दर्य की छटा पाठकों को मंत्रमुग्ध कर देती हैं। इसमें छ: अंक हैं। प्रत्येक अंक में एक-एक ऋतु का स्वाभाविक वर्णन किया गया है।

कवि ने नाटक के चतुर्थ अंक में वर्षा ऋतु का बहुत ही स्वाभाविक वर्णन किया है। कवि ने प्रस्तुत श्लोक में अनुप्रास तथा उपमा अलंकार में वर्षा ऋतु में काले काले बादलों से आच्छादित आकाशमंडल में हिमालय पर्वत की ओर पंक्तिबद्ध होकर जाती हुई हंसों की पंक्तियों का माला की भांति प्रतीत होने का अदभुत उदाहरण दिया है।

वर्षाकालः कलितककुभोल्लासलीलः सलीलं
सम्प्राप्तोऽयं प्रकटितघनाडम्बरोन्वम्बरान्तः ।
हंसश्रेणी हिमगिरिमभिव्योम्न आबद्धमाला
मालेवेयं पवनचलिता शोभते सम्पतन्ती ।।1।।[1]

कवि प्रसन्नचित्त मयूरसमूह की ओर संकेत करता है कि परस्पर बादलों के घर्षण से उत्पन्न ध्वनि को सुनकर मयूर समूह आनंदमय होकर नृत्य कर रहा हैं ।[2]

शीतल, सुगन्धित, मन्द त्रिविध वायु के स्पर्श की अनुभूति सभी को आनन्दित कर देती है, जिसकी प्रतीति सहृदयों को इस श्लोक में हो रही हैं - कदम्ब के पुष्पों के स्पर्श से सुगन्धित कपूरपुंज के समान शीतल तथा बादलों से गिरी हुई बूंदों को

ग्रहण करने वाला यह वायु इस काल में सुखकारी होकर सभी को आनंद प्रदान कर रहा है[3] और यह मेघसमूह आकाशवेदिका पर गर्जना करता हुआ सभी दिशाओं में फैलकर कहीं-कहीं पर बरस रहा है।[4]

इस ऋतु में सहृदयों को बादलों के मध्य में चमकती हुई पीतवर्णीय बिजलियों की पंक्तियाँ सर्पिनी की चंचल जीभ की भांति लपलपाती हुई प्रतीत हो रही है[5] और कहीं पर बिजलीरूपी सुंदर आंखों वाली, वर्षारूपी नटी, गगनवेदिकारूपी रंगमंच पर आकर हर्ष की वर्षा करती हुई सभी के संताप को दूर कर रही है। यहाँ पर वर्षा की बूंदों में सभी के शारीरिक, मानसिक ताप को कम करने की क्षमता को बताया गया है।

तापापनोदनकृते कृतहर्षवर्षा
वर्षानटीह वियदङ्गनरङ्गमेत्य ।
उतुङ्गनीरदमृदङ्गनिनादभङ्गी
संगीतकं नु तनुते तडिदन्तनेत्रा ।। 7।।[6]

वर्षा ऋतु में मेघों की भिन्न-भिन्न आकृतियाँ बन जाती है, वही प्रतीति कवि को भी हो रहीं हैं- कहीं पर तो ये बादलसमूह मदमस्त गज का रूप धारण कर रहे हैं तो कहीं पर ये भयंकर सिंह की आकृति धारण करके सभी के हृदयों को कम्पित कर रहे हैं।[7] बादलों का भयानक स्वरूप सहृदयों के हृदयों में भय का संचार कर रहा है।

कवि वर्षाकालीन नदियों को उन्मत्त अभिसारिकाओं की संज्ञा से संबोधित कर रहा है। यहाँ पर पाठकों को श्रृंगार रस की भी अनुभूति हो रही है। वर्षाकालीन नदियाँ अभिसारिकाओं की भांति आचाररूपी तट को भंग करके, भंवररूपी नाभि की शोभा को धारण करती हुई, संगम के लिए व्याकुल अपने पति समुद्र के पास जा रही है।

अभिनवजलपूर्णाः पुष्करिण्यो विभान्ति
तटमतिसलिलान्युच्छालयन्त्यो लसन्त्यः ।
मृदुलकमलजालश्रीभिरत्यन्तमेताः
कृतबहलतरङ्गाः सारसाद्यैर्विहंगैः ।। 15।।[8]

इस ऋतु में बरसाती कीड़ों से मंडित वनभूमि रंग-बिरंगे गलिचों की भांति प्रतीत हो रही है तथा उस पर बादलरूपी मृदंगों की ध्वनि को सुनकर यह मयूरसमूह नृत्य कर रहा है।[9] इस ऋतु में वृक्षों की पंक्तियां जलकणों से स्वच्छ होकर मोतियों की

माला के समान चमक रही हैं। सम्पूर्ण पृथ्वी वर्षा ऋतु में दुल्हन की तरह सजी हुई है।

वर्षा ऋतु में आकाश में प्रकटित इंद्रधनुष सभी के चित्तों को रोमांच से भर देता है, जिसका आभास सुधीजनों को इस श्लोक में हो रहा हैं- मेघयुक्त आकाशमंडल में प्रकट विभिन्नवर्णीय यह इंद्रधनुष आकाश की शोभा में वृद्धि कर रहा है।[10] कवि ने रूपक अलंकार में दामिनीरूपी नटी की विलासिनी क्रियाओं का श्रृंगारिक वर्णन किया है। यह दामिनीरूपी नटी आकाशरूपी रंगमंच में, मेघरूपी सूत्रधार के साथ हास्य सहित कटाक्ष करती हुई कामिनी की तरह नाच रही हैं।

सा सूत्रधारेण सहाम्बुदेन
तडिन्नटी पुष्कररङ्गभूम्याम् ।
समेत्य लास्यं कुरूते सहास्यं
द्राक् चञ्चला चंचललोचनेव ।। 24 ।।[11]

इस ऋतु में कहीं पर जामुन के वृक्ष लगे हुए हैं तो कहीं पर रंग-बिरंगे फूलों के गुच्छों से भरी हुई, सुगंधित आम वृक्षों की झुकी हुई डालियां सुशोभित कर रही हैं[12] वर्षा ऋतु के आगमन पर गोपबालिकाएं हरे भरे वृक्षों के नीचे, अपनी गौओं को बैठाकर नीचे गिरी हुई जामुन चुन चुन कर खा रही हैं।[13] इस काल में कहीं पर आनंदित होकर वृक्ष के झुंड में हरिणियों का समूह घास चर रहा है तो कहीं पर बंदर फलों से झुकी हुई डालियों पर इधर-उधर भ्रमण कर रहे हैं।[14] इस ऋतु में सभी प्राणी असीम आनन्द की अनुभूति कर रहे हैं।

दयानंददिग्विजय-

आचार्य मेधाव्रत ने दयानंददिग्विजय महाकाव्य के अष्टम सर्ग में वर्षा ऋतु का दार्शनिक वर्णन किया है। कवि ने वर्षा ऋतु में आच्छादित मेघमाला की तुलना योगियों की सिद्धि से की है क्योंकि योगियों की सिद्धियाँ मानसिक संताप को हरती है और वर्षा ऋतु शारीरिक ताप को नष्ट करने में सहायता करती है।[15] जिस प्रकार ज्ञानी संसारिक संताप को हरने के लिए अपने ज्ञान की वर्षा करते हुए यहां वहां पर भ्रमण करते रहते है। उसी प्रकार इस ऋतु में काले-2 मेघ आकाश में अपने पवित्र जल की वर्षा करते हुए इधर उधर विचरण कर रहे थे।

शोकापनोदाय महानुभावा-ज्ञानं यथा ज्ञानिजना ददानाः।
तथाम्बरे नीलमहाम्बुवाहा-विनिर्मल वारि विचेरुरुर्व्याम्।। 36।।[16]

महाकाव्य में बादलों के मध्य में चमकती हुई बिजली का स्वभाव चंचल

बताया गया है कि जिस प्रकार गुरु का सदुपदेश कुमार्गी शिष्य के ह्रदय में क्षणमात्र के लिए ही प्रकाशित होता है उसी प्रकार कृष्णवर्णीय मेघों के मध्य से यह बिजली कभी-2 चमक रही है।

तमोमये वर्त्मनि गच्छतो नु-र्गुरुपदेशः क्षणमात्रदीप्तः।
यथा भवेदम्बुदकृष्णकाये, विद्युत्प्रकाशोऽपि तथा दिदीपे।। 37।।[17]

कवि वर्षा ऋतु की सुंदरता का वर्णन करने में आध्यात्मिक उदाहरण देते हुए कहता है कि जैसे परमंहसों का समूह सांसारिक भोग विलासों को क्षणभंगुर समझकर ब्रह्मरुपी कमल में सुशोभित होकर ह्रदयरुपी मानसरोवर में आनन्दरुपी मोती प्राप्त करने हेतु जाता है वैसे ही इस समय ये हंस बिजली की चमक को देखकर मानसरोवर जा रहे हैं।

विद्युद्विलासानिव भोगलक्ष्मी-लासान् समालोक्य स हंससंघः।
स्वं मानसं ब्रह्मसरोजशोभं, प्रमोदमुक्ता अशितुं प्रपन्नः।। 38।।[18]

इस संसार में दिव्यज्ञान की वर्षा करने वाले विद्वानों, संतमहात्माओं के उपदेशामृत का पान करके शिष्य तृप्त हो जाते है। सदुपदेश की महिमा का वर्णन नीतिशतक में भी बताया गया है। उसी प्रकार वर्षाकाल में ये चातक बरसते हुए बादलों का जल का पान करके तृप्त हो गये है। चातक एक पक्षी है जो वर्षा का बहुत ही तल्लीनता से इंतजार करता है।

प्रवर्षतां ज्ञानमिवाम्बु दिव्यं, सतां बुधानामिव वारिदानाम्।
चिरं विनेया इव चातकास्ते, निपीय तृप्तां नितरां बभूवुः।। 39।।[19]

इस मोहमाया से युक्त संसार में जैसे अत्यन्त मोहरुपी अन्धकार से मनुष्य के ज्ञान चक्षु ढक जाते है, ठीक वैसे ही वर्षा ऋतु में इस संसार का नेत्ररुपी सूर्य भयंकर, विशाल शैलाकाररुपधारी बादलों से घिर गया है।

विशालशैलोपमभीमरुपैः पयोधरैः प्रावृषि लोकचक्षुः।
अवासि संमोहतमस्समूहै-र्यथाम्बकं ज्ञानमयं जनानाम्।। 40।।[20]

लक्ष्मी सभी के चित्त को कुमार्गी बना देती है लक्ष्मी का स्वभाव चंचल होता है। जिस प्रकार बहुत ज्यादा लक्ष्मी को प्राप्त करके अशिक्षित व्यक्तियों के चित्त मलिन तथा कुमार्गी हो जाते है। उसी प्रकार वर्षा से परिपूर्ण नदियों का जल मर्यादा रहित होकर मलिन हो गया था।[21]

वर्षा ऋतु सभी को बहुत प्रिय होती है। इस ऋतु में आकाश कृष्णवर्णीय मेघों से आच्छादित हो जाता है और उन बादलों के नीचे से मधुर शब्द करते हुए

आनन्दित होकर उड़ते हुए बगुलों की पंक्तियॉ मन्दारमाला की तरह सुशोभित होती हुई सभी को आनन्द प्रदान करती है ।

नीलाम्बुदानामवलीमधोऽधः प्रहर्षिता मञ्जुरवा बलाकाः ।
मन्दारमाला इव राजमानाः समुत्पतन्त्योऽजनयन्नृमोदम् ।। 42 ।।[22]

कवि के महाकाव्य में प्रकृति के मानवीयकरण की भी प्रतीति होती है। इस मेघरुपी सूत्रधार के साथ यह बिजलीरुपी नटी चपलनयना ललना की भांति परिहास करती हुई मानों आकाशरुपी रंगशाला में नृत्य कर रही है।

सा सूत्रधारेण सहाम्बुदेन, तडिन्नटी पुष्कररंगशालाम् ।
उपेत्य लास्यं विदधे, सहास्यं द्राक् चंचला चंचललोचनेव ।। 43 ।।[23]

कहीं पर सहृदयों को मेघरुपी निशाचरों के समूह बिजलीरुपी पताकासहित पवनरुपी रथ पर आरुढ होकर सुन्दर इन्द्रधनुषरुपी धनुष्य को धारण करते हुए कमलिनीकान्त सूर्य को चारों ओर से घेरते हुए दिखाई दे रहे थे।

मन्ये मरुतस्यन्दनवृन्दमिन्द्रा, नक्तञ्चराणामधिरुह्य मेघाः ।
विद्युत्पताका वृषचापचापाः, श्रीपदिमनीन्द्रं रुरुधुः समेताः ।। 44 ।।[24]

वर्षा ऋतु में हरि-2 घास से सुशोभित धान्य प्रदेशों के प्रान्त भाग में आच्छादित, नवीन इन्द्रगोपों से युक्त यह पृथिवी लाल रत्नों सी मनोहर किनारोवाली हरी साड़ी का तरह चमक रही थी।

हस्तिृणालङ्कृतधान्यदेशा, नवेन्द्रगोपावलिमण्डितान्ता ।
सत्पद्मरागाञ्चितप्रान्तभागा बभौ मही तत्र हरित्परीव ।। 45 ।।[25]

कवि ने इस ऋतु में मयूरों की स्वाभाविक क्रियाओं पर भी प्रकाश डाला है। ये विविध वर्णों से युक्त, मनोहर प्रदेशों के गलीचों पर मेघरुपी मृदंग के नाद के साथ-2 मधुर ध्वनि करता हुआ यह कलापियों का समूह चन्द्रकला की भांति अपने- अपने पंखो को फैलाकर नृत्य कर रहा था।

अनेकवर्णाम्बरचारुखण्डे, शिखण्डिनो मेघमृदंगनादेः ।
मृगांकखण्डाकृतिचन्द्रकालीं, वितत्य नृत्यं विदधु रुवन्तः ।। 46 ।।[26]

कुमुदिनीचंद्र -

यह कवि द्वारा सरल संस्कृत भाषा में लिखा गया एक उत्तम श्रेणी का उपन्यास है। इसमें षोडश कलायें हैं। इसमें प्रत्येक कला में एक नयी घटना का अहसास होता है। 'कुमिदिनी' इस उपन्यास की नायिका तथा 'चंद्र' इसका नायक है।

प्रतिनायक के रूप में स्थित क्रूरसिंह को उपन्यास के अंत में अपने द्वारा किए गए कुकर्मों का फल प्राप्त होता है। कवि ने मध्य मध्य में प्राकृतिक दृश्यों का भी बहुत सुंदर वर्णन किया है। इसमें मात्र तीन ऋतुओं का वर्णन हमें प्राप्त होता है। वर्षा ऋतु का वर्णन कवि ने उपन्यास में काफी स्थानों पर किया है।

उपन्यास में सर्वप्रथम पंचमी कला में वर्षा ऋतु से संबंधित वर्णन प्राप्त होता है। इस ऋतु में चारों दिशाओं में बादल छाये रहते हैं और सभी हर्षोल्लास से इसका स्वागत करते हैं। यहाँ पर कवि वर्षा ऋतु में दोपहर के समय का वर्णन कर रहा है। आज सूर्यमण्डल बादलों की माला से ढका हुआ नहीं है। नये कीट पतंगों से मण्डित, हरी घास वाली केदारभूमि सूर्य किरणों की प्रभा से बहुत ही सुंदर लग रही थी।

वर्षा ऋतु में स्वर्ग के मंदारवृक्ष की कान्ति को द्योतित करती हुई नीलमेघों की पंक्ति के नीचे सुंदर पक्षियों की माला चल रही थी, जो मधुर कलरव ध्वनि करती हुई दर्शकों के मन को आनन्दित कर रही थी। इस समय केदार (खेतों में) भूमि पर, अपने कार्य में तत्पर रहने वाले क्षेत्र रक्षकों की एक मण्डली आनन्दपूर्वक ग्रामीण गीत गा रही थी। इस सुहावने मौसम में कहीं पर कीट पतंगो से विचित्रित नए घास के मैदान की सुंदर उपवन भूमि में बादलरूपी मृदंगों के तीव्र गंभीर मनोहर नाद को सुनकर मयूरों का समूह केंका की ध्वनि करता हुआ अपने सुन्दर पंखों को फैलाकर खुशी से नाच रहा था। कभी तो भगवान सूर्य बादलों के पर्दे के बीच छिप रहे हैं तो कभी खुद को प्रकट करते हुए दर्शकों के आनन्द को उत्पन्न कर रहे थे। हरी घास खाने वाले स्थूल शरीर युक्त- गाय, बैल, भैंसा और मोटे शरीर वाले अन्य जानवरों का झुंड घास चरता हुआ आनन्दपूर्वक वन्यस्थानों में विचरण कर रहा था। इस समय चारों दिशाओं में आनन्द का संचार हो रहा था। ऐसे आनंदमय समय में महाराज श्री विजयसिंह ने शिकार के बहाने से बाहरी जंगल की सुंदरता को देखने की अभिलाषा से राजकुमार चन्द्रसिंह के साथ निकलते हैं।

' कालोऽयं कलितककुभोल्लासलीलानां सलीलानां प्रकटितधनधनाऽम्बराणां कृताखिलहर्षवर्षाणां वर्षाणाम्। अस्ति चापराह्न समयः। परमद्य मार्तण्डमण्डलं न ताट्टगावृतं मेघमालयां। अभिनवं पुरन्दरगोपमण्डिता हरिततृणकन्दलमयी केदारवसुन्धरेयं दिनेन्द्रकिरणं प्रभावलीभिः किमपि रमणीयं कलयति । मन्दारदामक्रान्तिं कलयन्ती कचिन्नीलाम्बुदावलौ मधोऽधः पतन्ती

चारूबलाकश्रेणी मधुर कलखं कुर्वाणा प्रेक्षकाणां मनोनन्दयति । केदारभुवि स्वकार्य तत्पराणां क्षेत्रपाल, कान्यं मण्डली सानन्दं गायति । ग्राम्य गीति- कावलीम्। कचिदिन्द्रगोपविचित्रितायां नूतनशाद्वललललितायां रूचिरोपवन सुन्धरायां जलद मृदङ्गानाममन्दमन्द मञ्जूलं नादमाकर्ण्य चन्द्र किकदम्बकं प्रफुल्लकेकारवं कुर्वन् निजचारू कलापवृन्दं प्रसार्य सानन्दं नृत्यति । भगवान् दिवाकरः जनयतितराम्। हरिततृणाशनपीवखपुवां गवेन्द्रगोवृन्दवलीविर्दमहिषादिपशूनां सन्दोहो दर्भांकुरान् कवलयन् सहर्षमरण्यानीस्थलीषु विचरति ।'[27]

कवि ने उपन्यास में वर्षा ऋतु के भयंकरस्वरूप का भी किया है। यहाँ पर सहृदयों में भय का संचार हो रहा है। इस समय विशाल जंगल में निरन्तर झिल्लियों (कीट) की झंकृत आवाज से युक्त भयंकर घनघोर अंधकार वाली रात्रिदेवी अधिष्ठित हो रही थी। संपूर्ण आकाश जल से भरे हुए काले बादलों की माला से घिरा हुआ था। दिशाओं में बादलों के संघर्ष से उत्पन्न सुनहरे वर्ण से युक्त रमणीय होते हुए भी मानो सर्पजिह्वा की माला के समान अति भयानक और बहुत लंबी रक्तरंजित बिजली बहुत चमक रही थी। उस विशाल वन में बहुत दूर से गुफाओं में शेरों की भयानक दहाड़ें सुनाई पड़ रही थी। शेर की उन गर्जनाओं के बीच हाथी जैंसे आकार वाले बड़े बडे बादलों की भयंकर घनघोर गंभीर गड़गड़ाहट भी छिपी हुई थी। ऐसे भयानक समय में यदि दुर्बल अंतःकरण वाला मनुष्य इस घनघोर वन में आयेगा तो निश्चित ही वह भयभीत होकर शीघ्र पंचत्व को प्राप्त हो जायेगा।[28]

कवि कहता है कि वर्षा ऋतु के आगमन पर सूर्य की कांति क्षीण सी हो जाती है तथा बादलों द्वारा गिराई गई स्वच्छ जल की बूंदों द्वारा चातकसमूह तृप्त हो गए हैं तथा इसके द्वारा मेंढकों के समूह को भी हर्षित कर दिया गया है। ऊंचे ऊंचे मालाकार विकरालस्वरूप पर्वत की भांति प्रतीत होने वाले बादलों द्वारा वर्षा करने पर यह कृष्णवर्णीय हाथियों का समूह नए-नए जल के गिरने पर निरंतर गर्जना कर रहा हैं और इस ऋतु में बादलों के मध्य में शीघ्रता से चमकने वाली तथा सुवर्ण के समान प्रतीत होने वाली विद्युत भी बहुत मनोहर लग रही है ।

वर्षा ऋतु में दिन के समय में किसी भी समय पर चारों दिशाओं में चमत्कृत बिजली चमकती रहती है। 'अभी भी बारिश होगी' ऐसा लोगों के द्वारा यह सभी ओर देखकर तर्क किया जा रहा है । तभी कुछ देर बाद बड़े-बड़े तांबूल के समान सख्त

बूंदोंवाली मूसलाधार वर्षा आरंभ हो जाती है । वन में संपूर्ण पृथ्वी पर जल ही जल प्रतीत हो रहा था। स्थान स्थान पर अंकुरित हुई हरी घास इंद्र के महल की अप्सराओं जैसी धरती को सुशोभित कर रही थी। इस जंगल में कोयल, तोता, कबूतर, मैंना, नीलकंठ,मयूर, चातक, कारण्डव एवं हंस इत्यादि सभी पक्षी अपने कलरव द्वारा मनस्वियों को प्रसन्न कर रहे हैं।

ऋतुरेष निराकृत दिवाकरस्त्विषः प्रशमितचातककदम्बकर्तृषः संपतदग्धबुधरोदर निर्मलनीरविपुषः प्रावृषः। उत्तुङ्गशैलमालाकारविडम्बिमिर्नीलनी-लैर्गजेन्द्रमञ्जुलैरभिनवजल गम्भीर गर्भ निर्धोषनिरन्तरैश्रञ्चच्चामीकररूचिर क्रान्तिजित्वर चञ्चलाच मत्कृतिमनोहरैः प्रकटितपुरन्दरैरधोगामिबलाक-पङ्क्तिचन्दिरैमनोरमन्दिरैरम्भोधराडम्बरैराच्छादितमखिलमम्बरतलम्। निजगम्भीर गार्जितैर्मदयन्ती मयूरवृन्दममन्दं कचिदन्तरान्तरा वर्षति बहुधारा सारं सान्द्रनीला मेघमाला। दिनेऽपि कर्हिचन काले समुल्लसतितरां सचमत्कारं तडिल्लता दिगन्तरालेषु । इदानीमेव वृष्टिर्मवित्रीति सम तर्क्यत जनैः। क्षणानन्तरमेव क्रमुकफलविशालैर्बिन्दुजालैरमिवर्षितुमारम्भि समूसलधारमभितोऽरण्ये कादम्बिनी कदम्बकैः। जलमयमीव भासते स्म सकलं महीतलम्। अस्मिन्नृतौ वनानि महारमणीयानिसमवालोक्यत स्थले स्थले हरित् तृणाङ्कुरमयी पुरन्दरगोपरमणीया धारिणीरा लोभ्यते स्म। जगन्नियामकेन प्रजापतिना वसुन्धरायां नैसर्गिकनिसर्गसुन्दरं विविधवर्णं मनोहरं चित्राम्बरमास्तीर्णमिववेति, कल्पनाऽऽविर्भवति सर्वेषामपि सचेतसां हृदि। काननेऽस्मिन् कोकिलकीरकपोतसारिका नीलकण्ठमयूर चातकचक्रवाककारण्डवजलहंसप्रमुखाः पतंगवरा- निजमञ्जुलकलखैर्मनोहरन्तितलं मनस्विनामपि।[29]

आचार्य मेधाव्रत कहते हैं कि श्रावण के महीने में कभी-कभी मेघमाला झरझर करके बरसती है तो कभी-कभी यह मेघमाला शांत हो जाती हैं। इस समय चारों दिशाओं में फैला हुआ आकाश में बादलों का समूह बहुत ही सुंदर दिखाई देता है तथा यह बादल नए-नए जल से भरी हुई सरोवर की शोभा को बढ़ा रहे हैं । बादलों की झज्जर की ध्वनि मीलो दूर तक फैली हुई पर्वतों के जंगलों में गूंज रही है । बादलों के समूह के छुप जाने पर भगवान सूर्य भी अपना तीव्रताप फैला रहा है । यह ऋतु विरहिणी जनों को अपने प्रिय की याद दिलाती है इसलिए प्रिया(कुमुदिनी) के विरह

से विक्षिप्त राजकुमार चंद्रसिंह को यह समय बहुत ही व्याकुल कर रहा है।

मासोऽयं श्रावणः। कदाचित्कचिन्मेघमाला सझर्झरवं वर्षति। कर्हिचिद् प्रशमं प्राप्नोति वृष्टिः। अन्तरिक्षतलं जीमूतजाललिलतमालोक्यते । अभिनवसलिलपूर्णानि सरांसिकामपि शोभां पुष्णान्ति। झर्झरबधिरितादिगन्तराः परः सहस्त्राः ससरन्ति पर्वतानिर्झखाराः परितः पर्वतपरिसरारण्यस्थलीषु। जलधरपटलनिलीनोऽपि रविरयमतितीव्रतापं तनुते। ईदृशे समये प्रिया विरहविक्षिप्तमना उन्मत्त इवासौ चन्द्रसिंहो मन्दमन्दं प्रचलन्नेव कस्याश्रन गिरिनिर्झरनिर्झ रिण्यास्तीरमुपाजगाम । तत्रागत्यासौ मुहूर्त विश्रमितुं विचिन्त्य वासांस्यवतार्य शैवलिनया निर्मलसलिले स्नानं व्यधात्। येन क्रान्ति किञ्चिन्निरस्य तनुशान्ति सुखमयं लेभे।[30]

निष्कर्ष-

इस प्रकार मेधाव्रत के काव्यों के परिशीलन करने पर वर्षा ऋतु का अदभुत और बहुत सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है। कवि ने कहीं पर तो वर्षा ऋतु के भयानक स्वरूप को वर्णित किया है तो कहीं पर इसको आनन्दप्रदात्री बताया है। इन्होंने अपने महाकाव्य में आध्यात्मिक उदाहरणों का प्रयोग करते हुए वर्षा ऋतु का हृदयग्राही वर्णन किया है। महाकवि कालिदास के बाद ऋतुओं का वर्णन करने में आधुनिक कवि मेधाव्रत का नाम स्मरण किया जाता है। मेधाव्रत जी बीसवीं शताब्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। इनके सभी काव्यों मे वर्णित प्राकृतिक छटा सभी को मंत्रमुग्ध कर देती है।

सन्दर्भाः-

1. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक
2. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 2
3. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 3
4. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 4
5. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या
6. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक
7. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 12
8. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक
9. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 16

10. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 22
11. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक
12. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 28
13. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 30
14. प्रकृतिसौन्दर्यम्, चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 32
15. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग, श्लोक संख्या 35
16. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
17. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
18. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
19. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
20. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
21. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग, श्लोक संख्या 41
22. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
23. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
24. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
25. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
26. दयानंददिग्विजय, अष्टम् सर्ग,
27. कुमुदिनीचंद्र, पंचमी कला, पृष्ठ संख्या 67
28. कुमुदिनीचंद्र, षष्ठी कला, पृ. स. 73
29. कुमुदिनीचंद्र, एकादशी कला, पृ. सं. 153-54
30. कुमुदिनीचंद्र, त्रयोदशी कला, पृ. सं 178-79

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. कुमुदिनीचन्द्र- आचार्य मेधाव्रत, प्रकाशन वर्ष 1996, प्रकाशक- हरियाणा साहित्य संस्थान, झज्जर, रोहतक हरियाणा।
2. दयानंददिग्विजयम् - आचार्य मेधाव्रत, अनुवादक श्रुतबन्धु शास्त्री, प्रकाशन वर्ष 1994, प्रकाशक कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, नरेला, दिल्ली।
3. प्रकृतिसौन्दर्यम्- आचार्य मेधाव्रत, अनुवादक पण्डित श्रुतबन्धु शास्त्री, प्रकाशन वर्ष 1934, प्रकाशक सत्यव्रत मंत्री आर्यसमाज, येवला, नासिक ।

❋ ❋ ❋